सूरज भरता पानी

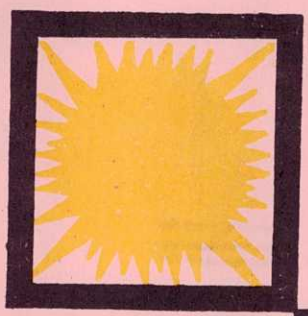

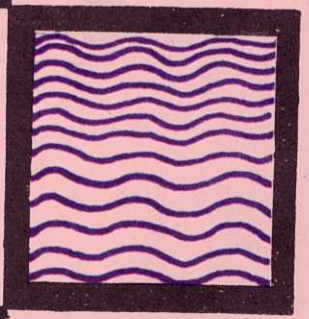

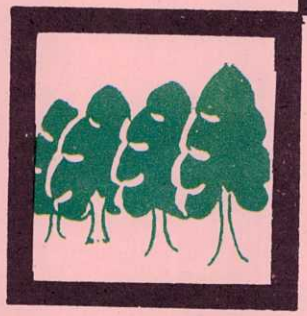

रमेशदत्त शर्मा

विज्ञान कथामाला

सूरज भरता पानी

ग्रामीण जीवन के पर्यावरण पर
आधारित उपन्यास

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
नयी दिल्ली-110002

सूरज भरता पानी

रमेशदत्त शर्मा

इस पुस्तक के प्रकाशन में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार हेतु राष्ट्रीय परिषद्, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार से मिली सहायता के लिए हम आभारी हैं ।

प्रकाशक :
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
शफीक मेमोरियल
17-बी, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नयी दिल्ली-110002
टेलीफोन : 3319282

ग्रन्थांक : 162
© भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ : मूल्य : 3.50
पहला संस्करण 1987

मुद्रक :
त्यागी प्रिंटिंग प्रेस
त्रिलोकपुरी
दिल्ली-110091

निवेदन

भारत जैसे देश में, जहां आज भी गरीबी और निरक्षरता बड़े पैमाने पर फैली हुई है, विज्ञान का एक काम यह भी है कि वह आम लोगों के तर्कपूर्ण ढंग से सोचने तथा काम करने की, और समय के साथ चलते हुए एक सही फैसले पर पहुंचने की, शक्ति को बढ़ावा दे। कहने की जरूरत नहीं कि विज्ञान महज उद्देश्य नहीं है, बल्कि वह एक दृष्टिकोण है। इसीलिए यह जरूरी है कि लोगों के सोचने-समझने के दृष्टिकोण में आधुनिकता लायी जाए, ताकि वे अपने और अपने आसपास के विकास से जुड़े हुए सवालों पर तर्कपूर्ण नजरिये से विचार करें और खेती तथा उद्योग-धन्धों में विज्ञान एवं तकनीकी से भरपूर लाभ उठा सकें। दरअसल, वैज्ञानिक मिजाज को सही तरीके से समझना और उसे कारगर बनाना आज हमारे देश की एक बड़ी जरूरत है। अगर देश में उन्नति की रफ्तार को तेजी से आगे ले जाना है तो अब विज्ञान और तकनीकी को हर भारतीय के जीवन का एक हिस्सा बनना होगा।

प्रधान मंत्री श्री राजीव गांधी ने भी भारत के वैज्ञानिकों से कहा है कि "देश को 21वीं शताब्दी में ले जाने के लिए हमें आज की जरूरतों के हिसाब से ही नहीं बल्कि उस समय की जरूरतों को सोचकर अभी से काम शुरू करना होगा। यह बात किसी एक क्षेत्र में नहीं बल्कि

कृषि, उद्योग, रक्षा और अन्य सभी क्षेत्रों के अनुसन्धान और विकास योजनाओं पर लागू होती है।" प्रधान मंत्री ने वैज्ञानिकों को इस बात के लिए भी आगाह किया है कि "वे नये उत्पादन तैयार करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखें कि उसके कारण पर्यावरण खराब न हो।"

विज्ञान और प्रौद्योगिकी की इसी महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ ने नवसाक्षर प्रौढ़ पाठकों के लिए विज्ञान एवं तकनीकी विषयों से जुड़े सन्दर्भों पर उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित करने की दिशा में पहल किया है। इसी दृष्टि से 'संघ' के कार्यालय में एक लेखक-कार्यशाला का आयोजन किया गया था, जिसमें विद्वान् लेखकों ने सक्रिय रूप से हिस्सा लिया और नवसाक्षरों के लिए महत्वपूर्ण पुस्तकें तैयार कीं। यह पुस्तक भी उसी लेखक कार्यशाला की एक सुखद उपलब्धि है। बड़ी सरल और रोचक भाषा-शैली में अपने विषय को प्रस्तुत करने वाली ये पुस्तकें, निस्सन्देह, अद्वितीय हैं।

कार्यशाला को सफल बनाने और अपनी पुस्तक को प्रकाशित करने का अवसर देने के लिए भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ की ओर से हम सभी सहयोगी लेखकों के प्रति आभारी हैं।

संघ द्वारा विज्ञान एवं तकनीकी विषयक लेखक-कार्यशाला के आयोजन और उसमें तैयार हुई पुस्तकों के प्रकाशन में विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार हेतु राष्ट्रीय परिषद्, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार से मिली सहायता के प्रति हम विनम्र आभारी हैं।

—जे० सी० सक्सेना
(महासचिव)

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
नई दिल्ली-110002
15 मई, 1987

सूरज भरता पानी

सूरज भरता पानी

"खट-खट-खट-खट-खट-खट-खट"। कुल्हाड़ी चलने की आवाज आ रही थी। पाना बुआ चौंक पड़ी। सारे गांव की बुआ थीं वे। पौ फटते ही गांव के बाहर शिव जी के मंदिर में टंगा घंटा बजा-बजाकर पूरे गांव को सवेरे की सूचना वही देती थीं। पर आज पता नहीं क्यों उनकी आंख देर से खुली। अपने ही घर के बाहर से आती 'खट-खट' की आवाज ने उनको चौंका दिया था। फिर अचानक ही तेजी से रजाई परे हटाकर वे उठ बैठीं और तेजी से बाहर की ओर चल पड़ीं। देखा तो चबूतरे पर खड़े नीम के पेड़ पर कुल्हाड़ी लेकर पिला हुआ था दामू, उनका सबसे छोटा बेटा। दौड़कर पाना बुआ ने उसकी कुल्हाड़ी पकड़

ली, "क्यों पड़ा है तू इस पेड़ के पीछे ?" पाना बुआ ने चीखते हुए कहा।

दामू थम गया। माथे पर छलक आई पसीने की बूंदें पोंछी। फिर धम से वहीं बैठ गया। मां का हाथ पकड़कर पास ही बिठा लिया और बोला, "तुम्हीं बताओ मां, मैं क्या करूं। रात को तुम्हारी बहू रधिया बड़ी रोयी।"

"हां-हां, रोयी होगी। आंसू ढरकाना तो उसे खूब आता है।" पाना बुआ भभक पड़ीं, "कल सुबह मैंने उसे लकड़ियां लेने भेज दिया था। बस, इसलिए महारानी ने तेरे आगे रोना-धोना शुरू कर दिया।"

"नहीं, नहीं मां," दामू ने कुल्हाड़ी एक तरफ खिसका कर मां की बात का 'ना-ना' के इशारे से हाथ हिलाकर विरोध किया—"तुम तो पूरी बात सुने बगैर अपना राग छेड़ देती हो", दामू बोला, "रधिया तो बड़ी सीधी-सादी छोरी है।"

"बस-बस रहने दे। अभी तीन महीने ही तो हुए हैं गौना हुए और चढ़ गया उस छोरी का जादू तेरे सिर पर !" पाना बुआ बोलने लग जाएं तो फिर अच्छे-अच्छों की बोलती बंद हो जाती है। पर दामू सबसे छोटा होने के कारण उनका मुंहलगा है। वह बोला, "कल तक तो तुम्हीं उसके गुण गाते-गाते थकती नहीं थीं। कल तक तो उसे पलंग से नीचे पांव भी नहीं रखने देती थीं। और अब वही तुम्हें अखरने लगी।"

पाना बुआ बेटे की ओर देखकर मुस्कराई, "देखो तो इस छोकरे को। कल तक नाड़ा बांधना भी नहीं आता था

इसको। अब ब्याह होते ही आंखें दिखाने लगा। सुनूं भी तो—मैंने क्या जुलम कर दिया तुम्हारी पटरानी पर ?"

दामू भी हंस दिया, "तुम तो नाहक ही नाराज होती हो मां। मैंने कब कहा कि तुमने उस पर जुलम कर दिया। अब तुमने तो कह दिया कि जा लकड़ी बटोर ला। गांव की दूसरी बहू-बेटियों के साथ गई तो उसे भी अच्छा ही लगा था। घर में घुसे-घुसे इतने दिन हो गये थे। सोचा था बाहर निकलेगी। जंगल में खूब घूमेगी। गन्ना चूसेगी। अपनी हम-उमर लड़कियों से हंसी-मजाक करेगी। वह सब तो हुआ नहीं। तुम्हें तो पता नहीं होगा मां, कि गांव के आसपास दूर-दूर तक जंगल तो क्या किसी पेड़ के भी दर्शन नहीं होते। शिव मंदिर के पास ही दो पीपल और दो बरगद खड़े हैं। उसके बाद तो खेतों की मेड़ों पर नागफनी या दूधिया भले ही दिख जाय। कहीं एकाध बबूल उगता मिल जाए। इनके सिवा दूर-दूर तक कोई पेड़-पौधा नहीं। कोसों दूर तक घूमी है रधिया। और कुछ नहीं मिला तो, सरकंडे ही काट लायी बेचारी। शाम को झुटपुटा होने पर थकी-मांदी घर लौटी तो ऊपर से तुम बरस पड़ीं बेचारी पर कि इतनी देर कहां लगा दी। जैसे वो मेला देखने गयी थी।"

"अरे रहने दे, मैंने कब कहा कि मेला देखने गयी थी।" पाना बुआ ने आंखें तरेरी—"अरे हम भी तो जाते थे लकड़ियां बटोरने। सवेरे जाकर रोटी-पानी के टैम से पहले ही आ जाते थे। खूब घना जंगल था। दिन में भी अंधेरा रहता था उसमें। कहीं खरगोश कुलांचें भरते और

कहीं हिरन। बीच जंगल में ही इतना अच्छा तालाब था। जब ब्याह कर आई थी तो तेरा बापू भी साथ जाता था कहता था, जंगल में शेर-चीते और हाथी भी हैं।" कहते-कहते पाना बुआ अपनी जवानी की यादों में खो गई। तब जंगल से वह कबड़िया ही बटोर कर नहीं लाती थीं, ढेर सारे फल भी ले आती थीं। कटहल तो इतने लगते थे कि उनका अचार साल भर काम आता। जामुन, अमरूद, आम के भी अनगिनत पेड़ थे जंगल में। आसपास के सभी गांववाले इनके फल खाते थे। बेल और कैथ की चटनियां इतनी अच्छी बनाती थीं पाना कि दामू का बापू गांव भर को चटनी ले जाकर चटाता फिरता था।

"कहां खो गई अम्मा ?" दामू की आवाज सुनकर चौंक पड़ी पाना।

"कुछ नहीं रे। पुराने दिनों की याद आने लगी थी," कहकर गीली हो आईं आंखों की कोर को धोती के छोर से पोंछा और कहने लगीं, "चारों तरफ कितनी हरियाली थी रे तब ! पूरे गांव में लोग ही कितने थे। 20-25 घर और डेढ़-दो सौ लोग। अब डेढ़-दो सौ घर ही होंगे। सारा जंगल समा गया चूल्हों में। काट-काटकर जला दी सारी लकड़ी। पूरे गांव में एक हमारे ही चबूतरे पर यह नीम का पेड़ बचा है। गांव भर की बहू-बेटियां इसी पर सावन में झूला झूलने जाती हैं। तोते, मैना, कबूतर, गौरैया और मोर भी इसी पेड़ पर सुस्ताते हैं। कभी-कभी बया अपने घोंसले बना जाती है। और तू बजमारे, इसे ही काटने चला था। पेड़ पर नहीं अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार रहा

था तू ! चल उठ इस पेड़ से माफी मांग।" खड़ी हो गईं पाना बुआ और हाथ पकड़कर दामू को खींचने लगीं।

हार मानकर दामू सिर झुकाकर खड़ा हो गया और हाथ जोड़कर बोला, "माफ करो नीम बाबा, मुझसे बड़ी भारी भूल हो जाती। अब मैं कभी तुम पर कुल्हाड़ी नहीं चलाऊंगा। न किसी और को चलाने दूंगा।"

दामू ने कुल्हाड़ी उठा ली। मां के कंधों पर हाथ रखकर चबूतरा पार करके घर के अंदर आ गया। वहां रधिया लस्सी के गिलास लिये खड़ी थी। पहले मां को दिया और फिर अपने पति को। बहू को असीसती पाना बुआ लस्सी का गिलास थामे पीढ़े पर बैठ गईं।

"तू भी तो पी बहू। जा अपना गिलास भी भर ला।" पाना बुआ ने अंदर रसोई में बैठी बहू को पुकारा। जब उसने अनसुनी की तो पाना बुआ ने और जोर की आवाज लगाई, "सुनती नहीं तू। अपना गिलास लेकर आ, नहीं तो रख ले अपनी लस्सी। मुझे भी नहीं पीनी।" यह कहकर उसने लस्सी से भरा गिलास वहीं जमीन पर रख दिया।

आखिरकार रधिया भी अपना गिलास भरकर वहीं आ गई। शरमाते-सकुचाते बोली रधिया, "मां जी, मैंने इनसे कुछ नहीं कहा था। पता नहीं कब ये कुल्हाड़ी लेकर निकल गए और पिल पड़े पेड़ पर। ऐसे ही मर्द बनते हैं, तो करें कुछ ईंधन का इंतजाम। लगाएं, फिर से गांव के चारों ओर पेड़। जाएं और सरपंच से कहें कि गांव में बिजली लगवाएं। मां जी, मेरे मायके में तो गोबर से गैस बनाते हैं

और उसी से रोटी पकाते हैं, पंप चलाते हैं, रोशनी करते हैं। मेरे बापू कहते थे, कि जल्दी ही सीधे सूरज से बिजली निकलने लगेगी। और कुछ नहीं तो मां जी, इनसे कहो मेरे बापू से मिल आएं।"

"शाबाश बहू। तू तो बड़ी समझदार है री।" कहकर पाना बुआ ने अपनी सयानी बहू के सिर पर असीस का हाथ फेरा और फिर अपने लड़के की ओर मुड़कर बोलीं, "बड़ा ही भागवान हे रे तू तो! तुझ कलमुंहे को ऐसी सुघड़ और सयानी बहू मिल गई। अब इसने जो कहा है, वही कर बेटा।"

दामू सिर झुकाकर बैठा रहा। लस्सी पीकर गिलास उसने एक ओर रख दिया। फिर गहरे सोच में डूबा-सा उठा और साइकिल उठाकर निकल गया।

दामू की ससुराल उसके अपने गांव से कोई दस किलोमीटर दूर रही होगी। उसके ससुर गांव के मुखिया थे। गांव के बाहर ही उसको अपना साला रमण मिल गया। जीजाजी को आता देख उसका चेहरा खिल गया। उसे दौड़कर अपनी ओर आते देखा तो दामू साइकिल से उतर पड़ा।

"कहिए जीजा जी, गांव में सब ठीक है न ?" पांव छूकर बोला रमण। पर इधर से जवाब नदारद। दामू तो कहीं और ही मगन था। "ये पेड़, पूरा जंगल। ये क्या है भाई। हमारे यहां तो यह पेड़ होता ही नहीं।" चकित होकर दामू ने रमण से पूछा।

रमण ने दादाजी के हाथ से साइकिल ले ली और उसे ठेलते हुए सीधे जंगल के बीच पगडंडी पर आ गया और बोला, "जीजा जी, यह पेड़ आज से तीन चार साल पहले बापू ने लगवाए थे। तब तो इसका नाम था कुबबूल। पर आजकल तो सब इसको सुबबूल ही कहते हैं।"

"सुबबूल क्यों कहते हैं भाई ?" दामू ने पूछा।

"सुबबूल इसलिए कहते हैं, क्योंकि इसमें सब भलाइयां

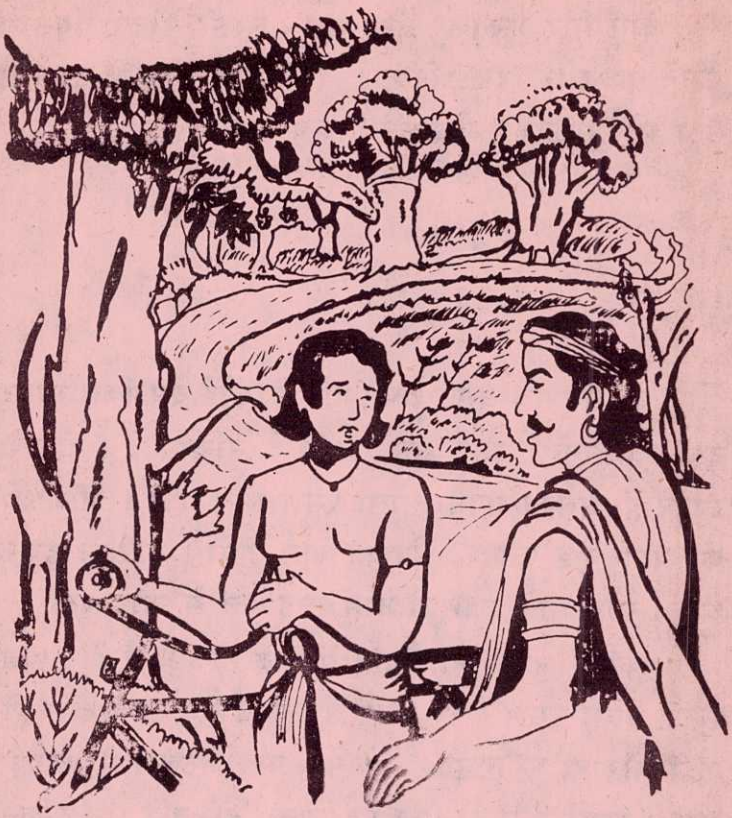

ही भलाइयां हैं। 'सु' माने भलाइ, 'कु' माने बुराई। इसलिए हमारी प्रधानमंत्री स्व० श्रीमती इन्दिरा गांधी ने इसका नाम रखा सुबबूल।"

"पर ऐसी क्या भलाइयां है रे इसमें ?" दामू जंगल के बीच रखी पत्थर की एक पटिया पर बैठ गया।

रमण ने साइकिल सुबबुल के एक पेड़ के साथ टिका दी और बताने लगा, "देखो जीजा जी, इसकी पत्तियां देखो। ये बहुत बढ़िया चारे के काम आती हैं। लकड़ी इसकी ईंधन के काम आती है और फलियां भी जानवर

खा सकते हैं। फिर इसको ज्यादा पानी भी नहीं चाहिए। बस एक बार पौध जमा दो। फिर तो अपने आप ही बढ़ता रहेगा। ये जमीन, जहां आप भरा-पूरा जंगल देख रहे हैं, पहले बंजर थी। अब तो हरियाली ही हरियाली है चारों तरफ।"

"इसके बीज कहां से मिलेंगे भाई ?" दामू ने पूछा।

"अब बीज की बात आप बापू से पूछना।" रमण ने जवाब दिया, "बापू तो बस पागल हो गए हैं इस सुबबूल के पीछे। गांव से जो भी लड़की ब्याह कर ससुराल जाती है, उसके साथ एक डिब्बा 'सुबबूल' के बीज जरूर रख देंगे और दूल्हे से वचन भरवा लेंगे कि जाते ही अपने गांव की परती या बंजर जमीन में सुबबूल के बीज बोएगा।"

"पर मेरे साथ तो उन्होंने बीज का कोई डिब्बा नहीं रखा।" दामू ने सवाल किया।

"आपका डिब्बा भूल गए बापू। बस दीदी की विदाई में बेसुध हो गए। बहुत प्यार करते हैं बापू हमारी दीदी को। पूरे खानदान में एक अकेली लड़की है हमारी दीदी। सबकी प्यारी। कैसी है वह। हमारी याद करती है या नहीं।"

"अरे, उसी ने भेजा है मुझे। पर ये तो बता, हमारे बीजों का डिब्बा संभालकर रखा है न।" दामू का ध्यान तो सुबबूल में ही अटका था।

"अरे क्यों नहीं, बिलकुल संभाल कर रखा है दामाद जी।" ये आवाज थी, गांव के मसखरे नाऊ काका की।

"आप कब आये काका जी राम-राम।" दामू अचकचाकर बोला।

"जीते रहो बेटा। कब से तो तुम्हारे पीछे-पीछे आ रहा हूं, पर तुम दोनों तो अपनी बातों में मगन हो। दीन दुनिया की कोई खबर ही नहीं। मैंने सोचा, जरूर रमण कोई फिलम देखने आया होगा। सो सुना रहा होगा उसकी कहानी कि कैसे हीरो ने अपनी कार ट्रक के पार करके चलती रेलगाड़ी पर चढ़ा दी। कैसे अकेले ने बीस आदमियों को धूल चटा दी। पर मान गया रे भाई। तुम तो सुबबूल में उलझे मिले।"

तब तक मुखिया का चौबारा आ गया था। काका आगे निकल कर जाने लगे तो रमण ने गैल रोक ली, "कहां जाते हो काका। घर में चलो और सुना के जाओ अपना ठहाका।"

"चल बेटे धमका, जहां तू वही तेरा काका!" काका ने तुक भिड़ाई तो दामू को भी हंसी आ गई।

रात को खा-पीकर जब लेटने लगा तो दामू के ससुर नारायण जी उसके पास आ बैठे। इससे पहले कि दामू कुछ बोलता, खुद नारायण जी बोल पड़े, "मुझे रमण ने सब बता दिया है। सुबबूल के बीजों का डिब्बा तुम ले जाना। पौध तैयार करने के लिए पोलीथीन की थैलियां भी मंगवा रखी हैं मैंने।"

"पोलीथीन की थैलियों में पौध तैयार होगी, सो कैसे?" दामू को बड़ा अचरज हुआ।

"अरे इसमें क्या है। पोलीथीन की थैली में मिट्टी और गोबर की खाद मिलाकर भर दो और गीली कर दो। फिर उसमें बीज रोप दो। जब बीज फूट निकले और एक-डेढ़ फुट की पौध तैयार हो जाय तो पोलीथीन की थैली सहित उठाओ और जहां चाहो, वहां जमीन में कोई हाथ भर का गड्ढा करके रोप दो और पानी लगा दो।" नारायण जी समझाने लगे।

"यह तो बड़ी अच्छी तरकीब बताई आपने। पर तीन-चार साल लगेंगे इस जंगल को पनपने में। तब तक हम ईंधन के लिए क्या करेंगे?" दामू ने सवाल किया।

"क्यों, ऐसी क्या मुसीबत है ईंधन की? देखो गोबर-गैस का संयंत्र लगवा सकते हो? पूरा गांव मिलकर बड़ा-सा संयंत्र लगवा ले।" नारायण जी ने रास्ता सुझाया।

"नहीं, गोबर-गैस हमारे यहां नहीं चलेगी। जानवर बहुत कम हैं। पिछले साल के सूखे में काफी जानवर चारे की तलाश में भटकते-भटकते मर गए। हमें तो आप कुछ और ही रास्ता बताइए जो तुरंत अपनाया जा सके।" दामू बहुत बेचैन दिखाई दे रहा था।

नारायण जी भी सोच में पड़ गए। फिर बोले, "देखो बेटा, कल मैं दिल्ली जा रहा हूं। मेला देखने। तुम भी मेरे साथ चलो। सुनते हैं इस मेले में सूरज की रोशनी को सीधे बिजली में बदलने का कमाल दिखाया जाएगा। देखते हैं चलकर क्या कमाल है इसमें। अब तुम सो जाओ, सुबह छह बजे की बस से निकल पड़ेंगे।" यह कहकर नारायण जी उठे और कमरे से बाहर चले गये।

दिल्ली में नारायणजी गांधी स्मारक निधि के अतिथि-घर में ठहरे। वे गांधी बाबा के पुराने चेले हैं। उन्हीं से नारायण जी ने देश-सेवा का व्रत लिया था। आजादी मिलने के बाद उनके बहुत से साथी बड़े-बड़े पद पाकर मौज मारने लगे। लेकिन नारायणजी ने अपने गांव में रहना ही ठीक समझा। वहीं रहकर उन्होंने अपने और आसपास के गांवों की परेशानियां सुलझाना शुरू किया। ज्यादातर नेता लोग उनके साथ जेल में रह चुके थे। जहां कहीं सरकारी ढील के कारण कोई काम अटकता देखते, तो सीधे लखनऊ या दिल्ली जा धमकते। अपने सामने ही फाइल मंगवाकर उस पर सही आदेश लिखवा लेते। इस तरह उन्होंने अपने दुर्गम इलाके में सड़कें बनवा लीं। बिजली के खंभे भी लगने शुरू हो गए हैं। साल भर में यहां बिजली आ जाएगी। गोबर गैस का उपयोग करने वाले गांवों में नारायणजी के गांव का पहला नंबर है।

"चलिए मैं तैयार हूं!" दामू नहा-धोकर कपड़े बदल-कर आ गया था।

"चलो बेटे, यहां से अधिक दूर नहीं है। पैदल ही चलते हैं," कहकर नारायणजी दामू को लेकर निकल पड़े।

सामने की सड़क पार करने से पहले नारायणजी ने मुड़कर देखा कि कोई गाड़ी तो नहीं जा रही। फिर दौड़कर नहीं, आराम से सड़क पार की। दामू तो दिल्ली पहली बार आया था। वह दौड़कर सड़क पार करना चाहता था। पर नारायणजी ने उसे रोका। अपने साथ-साथ आने को कहा। इस सड़क को पार कर के वे सड़क के बीच में बने

फुटपाथ पर खड़े हो गए। तब उन्होंने बाईं ओर देखा कि गाड़ियों का रेला कब रुकता है। जैसे ही रेला रुका, वे सधे कदमों से चल पड़े। सड़क से कुछ ऊंचाई पर बने फुटपाथ पर चलना शुरू कर दिया। चलते-चलते थोड़ी ही देर में दोनों इन्द्रप्रस्थ मार्ग के बिजलीघर के पास आ गए। नारायणजी ने दामू का ध्यान बिजलीघर की चिमनी से निकलते धुएं की तरफ खींचा। वे बोले, "जानते हो दामू– इस बिजलीघर में हर महीने लाखों टन कोयला फूंका जाता है, तब बिजली बनती है। कोयला धरती में से, कोयले की खानों में से निकलता है। अब जरा सोचो कि हमारी गिनती तो बढ़ती ही जा रही है। आजादी मिली थी तो हमारे देश की आबादी बत्तीस करोड़ के आसपास रही होगी। और अब हो गए हैं पचहत्तर करोड़ से भी ज्यादा। आबादी बढ़ने की रफ्तार यही रही तो हम सन् दो हजार में एक सौ करोड़ हो जाएंगे।"

"बाप रे, इतने लोग। कहां रहेंगे। क्या खाएंगे, क्या पिएंगे। उन्हें नौकरी कौन देगा। वे खेती कहां करेंगे। बड़ी मुसीबत हो जाएगी, फिर तो", दामू बोला।

"यही तो मैं कह रहा हूं बेटा। तुम अभी नौजवान हो। तुम जैसे शादीशुदा नौजवान इस बात को सोचें और और प्रण करें कि दो से ज्यादा बच्चे पैदा नहीं करेंगे तो हम आजादी की बाढ़ को थाम सकते हैं, "नारायणजी की बात सुनकर झेंप गया दामू और सकुचाता-सा बोला, "आप ठीक कहते हैं। हम पूरा ध्यान रखेंगे।"

"शाबास दामू। अब यही सोचो देखो कि ये कोयला

कितने दिन चलेगा। सौ-दो सौ साल चल गया। तो उसके बाद क्या होगा। ये सारी बातें हमको-तुमको सबको सोचनी चाहिए।" नारायणजी ने यह कहकर फिर सावधानी से सड़क पार की और थोड़ी देर बाद दोनों प्रगति मैदान की नुमाइश के गेट पर आ गए।

दामू दौड़कर एक-एक रुपये की दो टिकट ले आया। जैसे ही वे अंदर घुसे, तो सामने बड़े-बड़े हरफों में लिखा था—ऊर्जा। इस मंडप के सामने के मैदान में एक झोंपड़ी बनी थी। झोंपड़ी के आगे अलग-अलग किस्म के कोई दस-बारह नमूने रखे थे। सबसे ज्यादा भीड़ जहां लगी थी, वहां कांच और लोहे की बनी कई पेटियां-सी रखी थीं, जिसमें चावल, दाल और सब्जी पक रही थी।

नारायण जी दामू को ऐसी ही एक पेटी के पास ले

गए। वहां खड़ा नौजवान सबको समझा रहा था, "देखिए यह सोलर-कुकर है।"

"के बोल्या भाई, कूकर।" सबसे आगे खड़े किसी भाई के ये बोल सुनते ही सारे लोग हंस पड़े। वह नौजवान भी हंस दिया और बताने लगा, "नहीं भाई, कूकर नहीं कुकर—यानी पकाने वाला।"

"कैसे पकाता है यह?" दामू ने पूछा।

नौजवान आगे बढ़ा। पेटी खोली। उसका कांच का बना पल्ला ऊपर उठाया और दिखाने लगा, "यह ऐसे सूरज की गरमी से पक जाता है।"

"कितनी देर में पकता है चावल इसमें?" दामू ने फिर सवाल किया।

"यही कोई डेढ़ घंटे में।" नौजवान ने जवाब दिया।

"पर रोट्टी का के होगा? रोट्टी कैसे पकेगी?" यह वही कूकर वाले भाई की आवाज थी।

"रोटी तो आपको अंगीठी, चूल्हे या गैस-चूल्हे पर ही बनानी होगी। इसमें रोटी नहीं बन सकती," नौजवान ने जवाब दिया।

"जब बादल न हों और धूप न निकले, उस समय क्या करेंगे?" यह सवाल नारायण जी ने किया।

"उस समय तो यह काम नहीं करेगा। या तो आप धूप निकलने का इंतजार करें। नहीं तो बादल वाले दिन अंगीठी या चूल्हा सुलगाएं।" नौजवान ने जवाब दिया।

"ऐ भाई, इसमें धुआं कहां से निकलता है।" कूकर वाले भाई का सवाल था।

नौजवान हंस पड़ा। बताने लगा, "सूरज की गरमी से पकता है खाना। गरमी से इसके अंदर कुछ जलता नहीं हैं। उस गरमी को काली पुती चादर सोख लेती है और गरम हो जाती है। ऊपर से यह दूसरा पल्लू है कांच का, जो उस गरमी को बाहर नहीं जाने दाता।" फिर उसने उन तीन बर्तनों को ढक्कन लगाकर दिखाया। तीनों के ढक्कन भी काले पुते थे।

"ये काले रंग से क्यों पोता ? कोई और रंग नहीं मिला ?" उसी कूकर वाले ने पूछा।

"काले रंग से इसलिए पोता है कि ये सूरज की किरनों को सबसे अधिक सोखता है। दूसरे रंग भी सोखते है, पर इतनी अच्छी तरह नहीं जितना कि काला रंग। फिर काला रंग करना सस्ता भी पड़ता है। बस कोलतार लो और पोत दो।" नौजवान ने बताया।

"यह मिलेगा कितने में ?" दामू ने पूछा।

"देखिए इसकी कीमत तो है पांच सौ रुपये, लेकिन सरकार ने रियायत दे दी है। सो, आपको यह कुल साढ़े तीन सौ में मिल जाएगा।" नौजवान ने बताया। सुनते ही कुछ लोग मांगने लगे तो वह बोला, "यहां केवल नुमाइश के लिए रखे गए हैं। कुछ आगे बढ़िए तो दो-तीन बूकानों पर ये बिकते दिखेंगे। वहीं से खरीदिए।"

नारायण जी ने दामू को साथ लिया और दाल-भात पकाऊ पेटियों की कतार से आगे जाकर खड़े हो गए। वहां भी कुछ उपकरण लगे थे। वहां एक दाढ़ी वाला नौजवान था। वह आगे आया और समझाने लगा, देखिए ये तरह-तरह के वाटर हीटर हैं—पानी गरमाने वाले यंत्र।" फिर एक बड़ी-सी टंकी के आगे नीचे की ओर जुड़े चौकोर काले पुते शीशों के पास ले गया। और समझाने लगा, "ये दोपहर की धूप में 140 लिटर पानी को 55 डिग्री सेल्सियस तक गरम कर देता है।"

"तो भाई, फिर नहाएंगे कब ?" कूकर वाले भाई भी हीटर देखने आ गए थे।

"ऐसी बात नहीं" बिना भौंह सिकोड़े नौजवान बोला, "एक बार पानी गरम होने पर टंकी में यह गरम ही रहेगा। बेशक आप दूसरे दिन सुबह टंकी खोलिए और गरम कुन-कुने पानी से नहाइए।"

इसके बाद बहुत बड़ा पन-गरमावक (वाटर-हीटर) दिखाया गया था। दाढ़ीवाले नौजवान ने बताया, "यह 600 लिटर का है। इसमें जाड़ों की दोपहर में पानी 55 डिग्री सेल्सियस तक गरम हो जाता है। इसे अस्पतालों में

गरम पानी देने के काम में लाया जा सकता है। बड़े अस्पतालों में हर वार्ड की छत पर एक वाटर हीटर लगा दें। इस पर बिजली से तीन गुना कम खर्चा आता है। सूरज की धूप तो मुफ्त ही मिलती है। खर्चा तो सिर्फ लगाने और रख-रखाव का है। एक बार फिट कर दो, बस।"

कूकर वाले भाई ने पूछा, "भाई, हमें तो कोई छोटा हीटर दिखाओ।"

दाढ़ी वाला नौजवान पीछे बनी झोंपड़ी में गया और 97 लिटर वाला हीटर उठा लाया। जब उससे कीमत पूछी गयी तो बोला, "यही कोई साढ़े तीन सौ रुपये। इसमें एक यूनिट पर आठ पैसा का खर्चा बैठता है। यानी बिजली से छह गुना कम।"

इससे आगे बढ़े तो कमरा गरम रखने वाला सोलर-हीटर दिखाया गया था। दिखाने वाला नौजवान समझाने लगा कि इससे बरफीले इलाकों में घर और कमरे गरम रखे जा सकते हैं। तापमान 19 से 22 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ाया जा सकता है। हमारे देश की सीमाओं पर पहरा देने वाले नौजवानों के लिए यह बड़े काम का है।

और आगे बढ़ने पर दिखे सौर-सुखावक। वहां एक लड़की सबको समझा रही थी, "देखिए ये 'सोलर ड्रायर' है।—यानी इसमें सूरज की गरमी से आप साग-सब्जी सुखा सकते हैं। मछली सुखा सकते हैं। जहां नारियल होते हैं, वहां उसकी गिरी सुखाई जा सकती है। आलू के बरस बनाकर उन्हें सुखाया जा सकता है।" फिर वह आगे बढ़-कर दिखाने लगी कि किस तरह मिर्च, मटर, गोभी, प्याज,

गाजर सुखावक में सुखाये गये हैं।

"पर बहिन, वे चीजें तो हम धूप में फैलाकर भी सुखा सकते हैं, फिर ये मशीन क्यों खरीदें ?" दामू ने अपनी उलझन बताई।

"इसलिए भइया, क्योंकि एक तो इसमें बाहर धूप में सुखाने की बजाय समय आधा लगता है। दूसरे न धूल पड़े, न मिट्टी। न चूहे खाएं न चिड़ियां। और यह भी सुन लो भइया कि हमारे यहां हर साल तीन अरब रुपये के फल और साग-सब्जी सड़ जावे हैं। समझ गए।" कहकर खिलखिला दी वह लड़की।

"समझ गए !" दामू भी हंस पड़ा।

उधर नारायण जी इससे आगे रखे उपकरण में दिलचस्पी ले रहे थे। वहां पर कुछ अधेड़ उम्र के चश्मा-धारी साहब खड़े हुए थे, जो सबको बता रहे थे। वे कह रहे थे, "ये सूरजकी धूप से चलने वाला भभका है। ये देखिए दो किस्म के भभके हैं। एक तो दुहरी ढाल वाला और दूसरा इकहरी ढाल वाला। ये जो आप दुहरी ढाल वाला देख रहे हैं, इसे पूरब-पश्चिम में रखते हैं। इकहरी ढाल वाले का मुंह दक्खिन की ओर रखते हैं।"

"ये भभका करता क्या है ?" दामू ने पूछा।

"ये भमका सारे पानी को मीठा बना सकता है। आप इससे अतर भी बना सकते हैं।" फिर वे जहां से भभके में पानी जा रहा था, उस टोंटी को खोलकर पानी लाये और सबको चखाया। पानी सचमुच बेहद खारा था। इसके बाद ऊपर बनी टंकी में से टोंटी खोलकर पानी निकाला

और चखाया।

"ये तो बड़ा मीठा है भाई!" कूकर वाले भाई साहब भी आन पहुंचे थे।

"इसका उपयोग समुद्र में जहाजों को तट के निकट होने का पता देने वाले 'आकाशदीपों' यानी लाइटहाउसों में किया जा रहा है। वहां काम करने वाले लोग अब पीने के पानी के लिए दूसरों के भरोसे नहीं रहते। समुद्र के पानी को इस सौर भभके में डालते हैं और मीठा बनाकर पीते हैं। अलग किया गया नमक खाने के काम आता है।"

सौर-भभकों की इस कतार के पीछे सबसे अधिक भीड़ खड़ी थी। ये लोग सूरज से चलने वाला सिंचाई-पंप देख रहे थे। यहां समझाने के लिए तीन नौजवान खड़े थे। गांव से आये किसान भाइयों के लिए यह सबसे बड़ा अजूबा था।

"बाप रे, सूरज पानी खींच रहा है, कमाल हो गया!" कूकर वाले किसान भाई की आवाज थी यह।

तीनों नौजवानों में से एक ने आगे आकर बताना शुरू किया, "देखिए इसमें सूरज की गरमी को सीधे बिजली में बदल देते हैं। ये काम यह सोलर-पैनल या सौर-पट करता है,"—यह कहकर एक मोटी-सी पाइप पर लगे गोल-गोल काले चकत्तों वाले एक बड़े-से पट्टे की ओर उस नौजवान ने इशारा किया। वह आगे बताने लगा, "देखिए, ये देखिए उसमें 20 पट्टे लगे हैं। ऊपर से नीचे चार की कतार है और बाएं से दाएं पांच की कतार है। हर पट्टे में 36 सोलर सैल हैं। ये एक खास धातु से बनते हैं। सिलीकन

से। यों तो यह सिलीकन बालू में भी होती है। पर इसे शोधना पड़ता है। तो इस तरह इस सौर-पट में कुल 720 सैल लगे हैं। इन्हें 8 फुट चौड़े और 8 फुट लंबे एंगल आयरन के फ्रेम में जमाया गया है। हर सैल सूरज की गरमी सोखता है और उसे बिजली में बदल देता है। ये बिजली नीचे लगे तारों के जरिए दशमलव पांच यानी आधी हार्स पावर के सिंचाई पंप में पहुंचाई जाती है। यह पंप प्रति घंटा 4 हजार 3 सौ पचास लीटर यानी यही कोई 22 गैलन पानी निकालता है। इससे आधे एकड़ खेत की सिंचाई दिन भर में की जा सकती है। यानी 8 से 10 घंटों में। सूरज की रोशनी न होने पर इस पंप को स्टोरेज बैटरी से चलाया जा सकता है।"

"कीमत कितनी है इसकी ?" नारायणजी ने पूछा।

"कीमत अभी अधिक है। यही कोई 35 हजार रुपए। पर पहली बार ही खर्च करना पड़ता है। इसके बाद जो कोई खर्चा होता है तो पंप के रख-रखाव पर। बाकी सूरज की धूप का तो कोई खर्चा ही नहीं है।"

"इस कीमत को घटाने के लिए क्या कर रहे हैं आप ?" नारायणजी ने चिंता प्रकट की।

"देखिए इसकी कीमत कम करने के लिए हम आगे खोज-बीन कर रहे हैं। भारत में हमारे वैज्ञानिक भी इस खोज में लगे हैं और बाहर के देशों में भी। खर्चा अधिक आ रहा है सोलर सैल के महंगे पड़ने की वजह से। अब यह कोशिश हो रही है कि सोलर सैल किसी ऐसी धातु से बनाए जाएं जो कारगर तो इसी तरह हो, पर जिनकी लागत

कम आए।" नौजवान ने बताया।

नारायणजी ने एक गहरी सांस ली। "काश, हमने इधर पहले सोचा होता। सारी दुनिया सूरज की तरफ ताकने लगी है अब तो। पर तभी जब पेट्रोल के दाम बढ़े और पेट्रोल देनेवाले अरब देशों ने अपनी शर्तें रखनी शुरू कीं।"

यहां से नारायणजी आगे बढ़े। अंदर गए। बड़े सुन्दर तरीके से कोयले और गैस के बारे में, पेट्रोल के बारे में बताया गया था। एक जगह परदे पर फिल्म चल रही थी। उसमें बताया गया था कि किस तरह करोड़ों साल पहले दुनिया में जंगल ही जंगल थे। ये जंगल बाद में धरती की कोख में दब गए। उन्हीं से करोड़ों साल के बाद कोयला बना, पेट्रोल बना, जलने वाली गैस बनी। इसी में यह भी बताया गया था कि इन तमाम तरह के ईंधनों का जन्मदाता सूरज है। सूरज की किरनें हरे पौधे अंदर खींचते हैं। इन हरे पौधों की पत्तियों में एक हरे रंग वाला पदार्थ होता है क्लोरोफिल। यह क्लोरोफिल सूरज की रोशनी सोख सकता है। जड़ों की मार्फत पौधों में पानी पहुंचाता है। पत्तियों में बहुत बारीक छेद होते हैं, जिनमें कार्बनडाइ-आक्साइड गैस पत्तियों में आ जाती है। बस पत्तियां सूरज की गरमी से ऐसा गुल खिलाती हैं कि पानी और कार्बन-डाइआक्साइड को मिलाकर तमाम तरह के व्यंजन बना डालती हैं। साग-सब्जियां, कंद, मूल, दालें और तेल, अनाज और चीनी, दवाएं और सुगन्धियां सब इसी तरह बनते हैं। इसी करामात से पौधों में बसी सूरज की गरमी हमें कोयले और पेट्रोल के रूप में भी मिलती है।

इसी फिल्म में दिखाया गया था कि सूरज धरती से डेढ़ सौ अरब किलोमीटर दूर है। फिर भी धरती पर अपनी किरणों से इतनी गरमी फेंकता है कि एक मीटर चौड़े और एक मीटर लंबे हिस्से में 300 वाट बिजली के बराबर गरमी पहुंचा देता है।

दामू फिल्म देखता जा रहा था और उसके साथ आ रही आवाज बड़े ध्यान से सुन रहा था। अचानक परदे पर आग का दहकता-सा गोला दिखाई दिया। आवाज बता रही थी, "यही है सूरज। व्यास इसका है 14 लाख किलो-मीटर। इसकी सतह का तापमान कोई 5500 से 6000 डिग्री सेल्सियस सेंटीग्रेड रहता है। इतनी गरमी में फौलाद भी पिघलकर तरल गैस बन जाता है। हर साल सूरज धरती को जितनी गरमी देता है, उतनी गरमी लेने के लिए हमें 120 खरब टन कोयला जलाना पड़ेगा। पर कोयला धुआं देता है। हवा को गंदा करता है। सूरज की गरमी न तो कोई गंदगी करती है और न कभी खत्म होगी।"

फिल्म बंद हो गई। पीछे से आती आवाज ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया और ध्यान से देखने-सुनने के लिए धन्यवाद किया। पर दामू वहीं खड़ा था। गहरे सोच में डूबा हुआ। जब नारायण जी ने उसे झकझोरा, तो जैसे वह नींद से जागा हो। पलटकर उनसे पूछने लगा, "इसका मतलब तो यह हुआ कि हमारी धरती पर जो भी कुछ है, सब सूरज और पौधों की देन है।"

"तुमने बहुत ठीक समझा बेटा," नारायण जी ने दामू की पीठ ठोंकी। "देखो, सूरज से ही सब गरमी ले रहे हैं।

भले ही कोई कोयला जलाता हो या लकड़ी। उसमें भी गरमी सूरज की दी हुई है। मोटर गाड़ियां चलती हैं पेट्रोल से, ट्रैक्टर चलता है डीजल से। पर ये भी सब सूरज की देन हैं। पेट्रोल बनाते समय कच्चे तेल को जब शोधते हैं तो तमाम दुनिया की चीजें निकलती हैं। मिट्टी का तेल भी, प्लास्टिक भी, नाइलोन और टेरिलिन बनाने का कच्चा माल भी। सो, ये भी सब सूरज की ही देन हुईं। हमारी देह जिस गरमी से चलती है, वे सभी तरह के भोजन भी सूरज की ही देन हैं। ये हमें पौधों की मेहरबानी से मिलते हैं। यहां तक कि जो मांस खाते हैं, उन्हें मांस भी उस घास की बदौलत मिलता है, जो मांस देनेवाले जानवर ने खाया था। बेटा, सच तो यह है कि हम इस धरती पर सूरज और पौधों के मेहमान हैं।"

नारायण जी दामू को लेकर वहां पहुंचे, जहां सूरज से खाना बनाने वाले 'कुकर' बिक रहे थे। उन्होंने दो कुकर खरीदे। दामू सोचने लगा कि रधिया कितनी खुश होगी। अब सूरज की किरणों से दाल-भात पकायेगी। इधर दाल-भात पकेगा, उधर चूल्हे पर कुछ रोटियां डाल लेगी। हर रोज नहीं जाना पड़ेगा अब उसे लकड़ियां बटोरने। हफ्ते में एक दिन ही जाएगी तो भी लकड़ियां काफी रहेंगी। फिर तीन-चार साल में तो गांव के पास ही सुबबूल का जंगल भी होगा। सुनहरे सपनों में खो गया दामू।

□□□

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
शफीक मेमोरियल
17-बी इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002